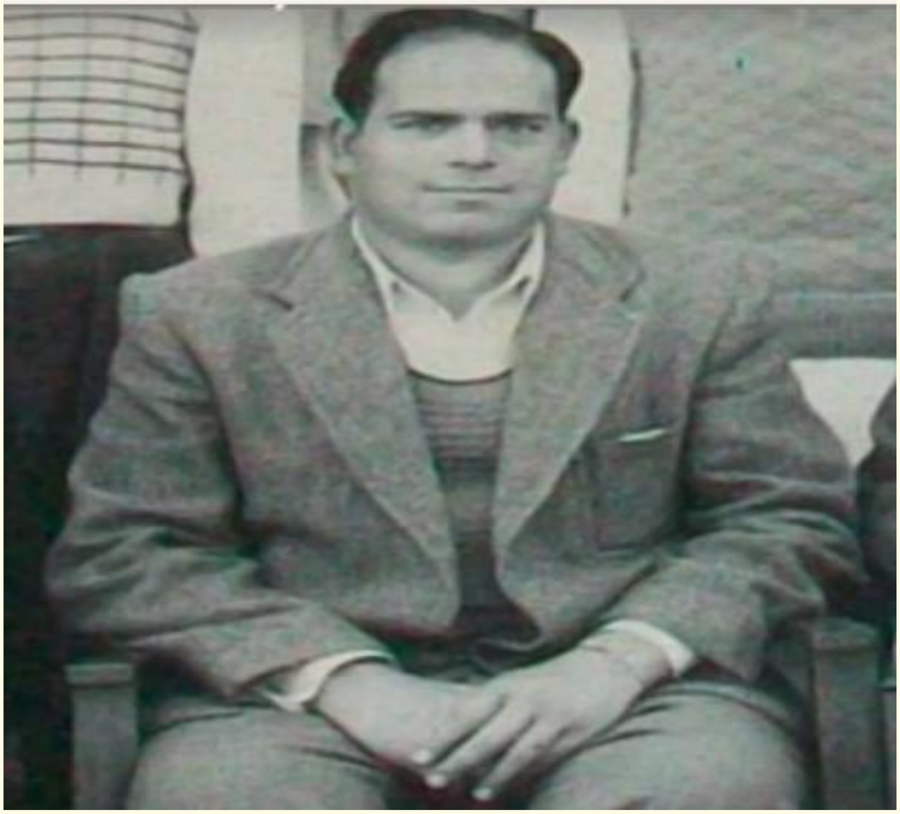
हमारे पिता जी श्री धर्म पाल त्रिखा के जीवन के अविस्मरणीय संस्मरण



डॉ अरुण त्रिखा

एक श्रद्धांजलि

दो शब्द

यह लघु पुस्तिका एक दिवंगत पिता आदरणीय धर्म पाल त्रिखा जी के प्रति उनके बेटे डॉक्टर अरुण त्रिखा का श्रद्धांजलि रूप में एक छोटा सा प्रयास है। 1920s के युग से 1998 (जब पिता जी का देहावसान हुआ) तक की लम्बी यात्रा को कुछ एक पन्नों में समेट पाना कोई सरल कार्य तो नहीं है लेकिन फिर भी एक प्रयास किया है। जो भी स्मरण हो आया, जो भी बन पाया, बस लैपटॉप लिया और लिखते ही गए। गूगल की 2018 और 2021 की पोस्ट्स ने इस प्रयास में कुछ-कुछ सहायता की, अगर हम यह कहें कि इन्हीं पोस्ट्स से इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा मिली तो शायद कोई अतिश्योक्ति न हो। डॉक्टर ललित गुप्ता जी की Daily Excelsior में प्रकाशित दो Columns ने हमें प्रेरित किया कि अगर अपने पिताजी को जीवित रखना है तो इससे सरल कोई कार्य नहीं हो सकता। हम ललित जी का ह्रदय से धन्यवाद् करते हैं।

हम कोई शिक्षित लेखक तो है नहीं, जो मन में आया, जो स्मरण हो आया वही लिख दिया, अपने ह्रदय की भड़ास निकालने का इससे सरल साधन और कौन सा हो सकता है।

डॉ अरुण त्रिखा — सितम्बर 2025

कनाडा

आभार

हम कोई लेखक तो हैं नहीं, जो-जो विचार, जैसे-जैसे हृदय पटल पर उभरते रहे हम लिखते चले गए, और यह लघु पुस्तिका तैयार हो गई। हमारी लेखनी में हजारों त्रुटियां होंगी जिसके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं। वर्षों पुराने संस्मरण लिख पाना कोई साधारण कार्य नहीं है।

हम अपने छोटे भाई स्वर्गीय अनूप जी के बेटे गौरव के आभारी हैं जिसने इस पुस्तिका में शामिल किए गए सभी दुर्लभ चित्र हमारे लिए स्कैन किए।

डॉ अरुण त्रिखा सितम्बर 2025
कनाडा

इस पुस्तक में कुछ संस्मरण एक से अधिक बार रिपीट हुए हैं जिसके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं

डॉ अरुण त्रिखा सितम्बर 2025
कनाडा

हमने त्रुटियां चेक करने में यथासंभव प्रयास किया है लेकिन अनजाने में यदि कोई रह गयी हो तो क्षमाप्रार्थी हैं, इंसान ही तो हैं हम।

दोमाना ग्राम का वोह छोटा सा घर आज भी आंखों के सामने से गुजर जाता है:

घर क्या, एक छोटा सा 10x10 फीट का कमरा ही तो था। यही हमारा सर्वस्व था। कमरे में दीवार के साथ सटी हुई एक चारपाई, कोने में स्टोव पर मां खाना बनाती थी।ज़मीन पर ही बर्तन, किचन आदि का सामान था, जमीन पर मैं और मेरे बड़े भाई, बड़ी बहिन बैठ कर पढ़ते, होमवर्क इत्यादि करते थे। बड़े घर, अमीरी आदि के तो कभी सपने भी नहीं देखे थे, नीयत ठीक थी, रुधिर में परिश्रम की धारा प्रवाहित थी, ईश्वर का अपार सहारा था, सारा जीवन ऐसा लगा जैसे ईश्वर ही हमारे जीवन की नैया को चला रहे हैं, उनका धन्यवाद,हमारा परिश्रम आज हमें, हमारे बच्चों को प्रगति के ऐसे स्थान पर पंहुचा गया है,जिसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है।

अक्सर कहा जाता है कि बचपन में दिए गए संस्कार, शिक्षा, मानवीय मूल्य आदि मनुष्य को सारी उम्र याद रहते हैं, इसीलिए तो उन वर्षों को Formation years कहा जाता है। यही वोह वर्ष होते हैं जिनमें मनुष्य का व्यक्तित्व, पर्सनेलिटी बनती है।

4-5 वर्ष की आयु में पिताजी के उस थप्पड़ ने ही हमें इतना आत्मविश्वासी बना दिया कि आज 2025 में जिस कार्य को

सम्पन्न किया जा रहा है, कभी सोचा भी न था, बिल्कुल अविश्वसनीय,आश्चर्यजनक किंतु सत्य है। आज भी Challenges लेने में बड़ा मजा आता है,आज भी मन से यही निकलता है,I can do it.

किसी चैलेंज की सफलता पर आज भी उतनी ही प्रसन्नता होती है, जितनी 10-12 वर्ष की आयु में होती थी।आज भी सफलता प्राप्त होने पर चिल्ला-चिल्ला कर सभी को बताकर और ईश्वर का धन्यवाद करके अपार प्रसन्नता का अनुभव होता है।

इसी संदर्भ में बाल्यकाल का एक किस्सा स्मरण हो आया:

बहुत दिनों से BODMAS के सिद्धांत से कुछ Sums को हल करने का प्रयास कर रहे थे। समझ आ नहीं रही थी कि समस्या कहां अड़ी हुई है, किसी से पूछना नहीं था,सोते जागते, सपनों में इसी गुत्थी को सुलझाए फिरते थे, विश्वास था कि समाधान मिल ही जायेगा,निकाल के ही छोड़ेंगे।आखिर जिस दिन समाधान मिला तो ठीक उसी तरह चिल्लाने को मन किया जैसे सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक Archimedes चिल्लाया था। पानी के बड़े से टब में बैठे उस वैज्ञानिक ने फिजिक्स का एक बहुत बड़ा सिद्धांत दे डाला और वोह चिल्ला उठा “Eureka, Eureka” अर्थात जिसके लिए वोह संघर्ष कर रहा था, उसे मिल गया।

10 वर्ष का बालक (हम) भी दौड़ कर घर से बाहर आ गए थे, स्ट्रीट लैंप के हल्के-हल्के प्रकाश में अपना सिर और पीठ थपथपाई थी, स्वयं को शाबाशी दी थी, कोई देख लेता तो शायद पागल ही कह देता, पर क्या करें, वैज्ञानिक तो ऐसे ही होते हैं, वोह पागल ही होते हैं।

पिताजी के अंतिम दिनों के संस्मरण:

पति-पत्नी को एक दूसरे के जीवन साथी माना गया है।जीवन-साथी यानि ऐसे साथी जो एक दूसरे के साथ जीवन भर के लिए जुड़े हों, यां यूं कहें कि दोनों का जीवन एक दूसरे के साथ फेविकोल के जोड़ की भांति जुड़ा हो। कई बार ऐसा भी अनुभव किया गया है कि जीवन-साथी की इस अद्भुत जोड़ी में से एक के छूट जाने पर, पीछे रहने वाले साथी पर क्या बीतती है, वही जानता है, वोह तो ऐसे टूट जाता है कि जैसे जीवन का अंत ही हो गया है। वोह अपनी मृत्यु के दिन गिनने लगता है, अपनेआप को बिल्कुल अकेला महसूस करने लगता है। उसे जीवन दूभर और कठिन दिखने लगता है। जीवनसाथी की परिभाषा का अविष्कार जिसने भी किया होगा,शायद वोह ठीक ही होगा, जीवन रुक सा जाता है।

कुछ ऐसी ही स्थिति, हमने पिताजी के अंतिम दिनों में देखी थी। विदेश में होने के कारण, दुर्भाग्यवश अंतिम समय (1998) में

हम उनके पास तो नहीं थे लेकिन जब कभी भी पटियाला से जम्मू आए तो उन्हें उसी ड्राइंग रूम के कोने में टीवी देखते पाया जहां उन्होंने जीवन का अधिकतर समय व्यतीत किया।

इंसान सारा दिन टीवी भी तो नहीं देख सकता। दो बेटे एवम उनका परिवार साथ उसी घर में रहता था लेकिन उनकी भी तो अपनी व्यस्तता होती थी। बड़ा बेटा जम्मू में ही अपने परिवार के साथ अलग मकान में रहता था, कभी कभार आकर मिल जाता था।

कहने का तात्पर्य यही है कि हर कोई अपना जीवन व्यतीत कर रहा है लेकिन बुढ़ापे का अकेलापन कौन कटवाए, इस आयु में कौन फुल-टाइम सहारा बने? केवल पति-पत्नी का बंधन ही ऐसा अटूट बंधन है जो एक दूसरे का सहारा होते हैं, और कोई विकल्प नहीं है। ईश्वर के संविधान में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है कि सिवाय किसी एक्सीडेंट आदि के, पति और पत्नी दोनों एक साथ,इक्कठे इस संसार से विदाई ले लें, इस संसार को अलविदा कह दें, कूच कर जाएं।

पिताजी के संस्मरण लिखते-लिखते हमें 2024 की निम्नलिखित फेसबुक पोस्ट स्मरण हो आयी, आइये पहले इसे ही देख लें:

Happy father's day:

2024 के फादर्स डे पर एक बच्चे के भविष्यनिर्माण में "पुत्र का पिताजी को नमन।"

Father's Day का दिव्य पर्व हर वर्ष जून के तीसरे रविवार को मनाया जाता है। हर वर्ष एक ही विचार उभर कर आता है कि क्या माता पिता को वर्ष के केवल एक दिन Mother's day /Father's day पर ही स्मरण करके अपना उत्तरदाईत्व पूर्ण किया जा सकता है, कदापि नहीं। इन्हें जीवन भर, पल-पल,हर क्षण भी स्मरण किया जाए तो कम है।

हमें तो इस दिन ऐसे अविस्मरणीय पल स्मरण हो आते हैं जिन्हें अपनी अल्प बुद्धि एवम साधारण लेखन के अनुभव से, शब्दों के माध्यम से चित्रण करके उन्हें अपनी अंतरात्मा के तारों से जोड़ने का प्रयास करते हैं।

आज भी उसी तरह का एक संस्मरण लिखने का प्रयास कर रहे हैं, एक ऐसा संस्मरण जो हमारे पिताजी की अनुशासनप्रिय एवम Hard task master वाले व्यक्तित्व को दर्शाता है।

बात शायद 1955 के इर्द गिर्द के वर्षों की रही होगी जब हमारी आयु मात्र 3 वर्ष की थी। आज भी Math का सब्जेक्ट अक्सर बहुत ही कठिन और जटिल माना जाता है, लेकिन सही टीचर और सही मार्गदर्शन सब कुछ सरल बना देता है। यह उसी अध्यापक एवम हमारे पिताश्री का कमाल है जिसके कारण हम

जम्मू कश्मीर एजुकेशन बोर्ड के मैट्रिक की परीक्षा में टॉप Ten की लिस्ट में आ सके। नमन करते हैं।

Abacus का तो हमने नाम तक नहीं सुना था,देखना तो दूर की बात है। पिता जी हमें गांव के घर में, एक छोटे से कमरे में फर्श पर बैठे गिनती सिखा रहे थे। सीखने का माध्यम था “राजमाश के दाने”,जी हां वही राजमाश के दाने जिनसे सब्ज़ी बनती है।

पिता जी एक दाना दिखाते और कहते बोलो 1,हम बोलते 1, फिर दो दाने दिखाते और कहते बोलो 2, हम बोलते 2, इसी क्रम में आगे बढ़ते जा रहे थे। हमारे नटखट 3 वर्षीय बालक के मस्तिष्क में कुछ Slow pick-up जैसा हो रहा था। 3-4 बार समझाने के बाद जब हम न सीख पाए तो पिताजी ने झुंझलाते हुए हल्का सा थप्पड़ जड़ दिया, हम तो डर के मारे रोने लगे, इस डर के कारण हमारा भी आत्मबल टूट सकता था लेकिन यह थप्पड़ एक ऐसा थप्पड़ था जिसने हमें आत्मविश्वास के ऐसे शिखर पर पंहुचा दिया कि ज्ञानप्राप्ति के लिए कभी किसी की सहायता की आवश्यकता ही नहीं पड़ी। सारे विद्यार्थी जीवन में ट्यूशन आदि का सहारा लेते हैं लेकिन हमारे लिए ट्यूशन तो दूर की बात, किसी से भी, कभी भी, किसी भी, सब्जेक्ट के लिए कोई सहायता नहीं पड़ी।

हमारा फेवरेट सब्जेक्ट जिसमें हमने पीएचडी की, केमेस्ट्री ही था लेकिन हिस्ट्री, पॉलिक्ट्स, अध्यात्म,संस्कृत,कंप्यूटर साइंस और न जाने कौन-कौन से सब्जेक्ट Self-study से समझने में योग्यता प्राप्त कर ली। यह सब कहने का हमारा अर्थ यह कतई नहीं है कि हमने इन Diverse subjects में महारत प्राप्त कर ली बल्कि इतना ही है कि हमें ऐसे विषयों में भी रुचि हो गई जिनसे विज्ञान का विद्यार्थी दूर भागता है।

पिताजी के उस थप्पड़ का ही परिणाम है जिसने हम जैसे नौसिखिए से लगभग 1300 ज्ञानप्रसाद लेख लिखवा लिए, कई Research papers लिखवा लिए, 1100 के लगभग विडियोज बनवा लीं और विश्वव्यापी ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार के माध्यम से हमारे गुरु, परम पूज्य गुरुदेव पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी के विचारों का प्रचार-प्रसार करवा लिया।

आज 16 जून 2024 को उस महान आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।

लगभग 50 वर्ष पूर्व, 1962 के लगभग की बात होगी। हमारे पिताजी गवर्नमेंट हाई स्कूल Chann Rorian में हैड मास्टर थे और तीन वर्ष बाद उनकी ट्रांसफर गवर्नमेंट हाई स्कूल बरवाल में हुई थी। हमारे परिवार में पांच भाई बहिन, माता पिता समेत सात सदस्य थे। शनिवार स्कूल का कार्य समाप्त करने के बाद

घर की सारी पैकिंग करनी थी और अगले दिन रविवार को ट्रक में लाद कर बरवाल पहुंचना था और फिर रविवार को ही खोल कर सोमवार स्कूल जाने के लिए तैयारी करनी थी। उन दिनों स्कूल के हैड मास्टर की पदवी को बड़े आदर सम्मान के साथ देखा जाता था। Chann Rorian गांव के ही एक ट्रक मालिक ने पिताजी को ऑफर किया था कि आपको चिंता करने की कोई बात नहीं है मैं फ्री में आपका सारा सामान लोड करके बरवाल ले जाऊंगा और वहां अनलोड करके वापिस आ जाऊंगा। रविवार 11 बजे का समय निश्चित किया गया था। माता जी ने, हम सबने तो अधिकतर सामान शनिवार की रात को ही पैक कर दिया था। रविवार को ब्रेकफास्ट करके तैयार हो गए थे कि ट्रक अपने समय पर 11 बजे आ जायेगा और हम 2-3 बजे बरवाल पहुँच जायेंगें लेकिन ट्रक वाले का इंतज़ार करते करते सारा दिन निकल गया, उन दिनों कोई फ़ोन वगैरह तो होते नहीं थे,न कोई समाचार,न कुछ पता कि ट्रक कब आएगा, कब हम चलेंगें और पहुंचेगें। सारा दिन इंतज़ार के बाद रात 9 बजे ट्रक आया, सामान लोड किया, फिर बरवाल अनलोड किया और इसी प्रक्रिया में रात के 12 बज गए। इस घटना से यही शिक्षा मिली कि ऐसे कामों के लिए फ्री की तो बात कभी सोचनी ही नहीं चाहिए और कोई reliable व्यक्ति ही होना चाहिए। आज की और उन दिनों की स्थिति में ज़मीन-आसमान का अंतर् है।

अब आते हैं पिता जी की निष्ठा और अनुशासन की बात पर।

सर्दियों के दिन थे और स्कूल के टाइम 10 से 4 होते थे। पिताजी तो सुबह उठकर पूरे टाइम से स्कूल पहुँच गए। वह तो अपनी ड्यूटी को इतने अधिक समर्पित थे कि न तो नींद की कोई प्रॉब्लम होती थी,न भूख की चिंता। उन्हें तो कपड़े, किताबें, सामान इत्यादि कुछ भी ढूंढने की समस्या नहीं थी। उन्होंने पेण्ट-सूट,टाई पहनी और समय से पहले ही यानि साढ़े 9 बजे स्कूल पहुँच गए। हम सारी उम्र उन्हें देखते आये थे ,समय से पहले की ही पहुंचने की आदत बन चुकी थी, यहाँ तक कि हमारी शादी में भी समय से पहले पहुंच गए थे। लड़की वाले अभी तैयारियां ही कर रहे थे। HaHa यह punctuality की बात तो तीसरी पीढ़ी, हमारे बच्चों में भी आ गयी है।

खैर, इस बात को इधर ही छोड़ कर चलते हैं।

बरवाल स्कूल में हम चारों भाई बहिन का प्रथम दिन। अगर उस दिन पिताजी ने वोह सज़ा न दी होती तो शायद आज हम भी अधिकतर लोगों की Take-it-easy वाली category में होते। तो क्या सज़ा मिली थी हमें ?

पिताजी तो समय से पहले स्कूल पहुँच गए थे, प्रॉब्लम तो हम बच्चों की थी जिन्होंने कितना कुछ ही ढूंढना था और फिर बच्चे

तो बच्चे ही होते हैं। हम तो स्कूल में समानुसार पहुंच नहीं पाए और Recess के बाद ही पहुंच पाए लेकिन स्कूल पहुँचने पर का दृश्य बहुत ही अविश्वसनीय, आश्चर्यजनक किन्तु अविस्मरणीय था जो आज तक मस्तिष्क पटल पर छाप छोड़े हुए है। Recess के बाद स्कूल का Main गेट बंद कर दिया जाता था और जो बाहिर रह गया उसे सज़ा मिलती थी,तभी वह अंदर आ सकता था।आज गेट पर हम चारों खड़े थे। हैड मास्टर के बच्चे हैं तो क्या हो गया। सज़ा तो वही मिलेगी जो औरों के लिए थी,कोई रियायत नहीं,कोई सिफारिश नहीं। चपरासी ने गेट खोला, हम चारों ने सिर पर बस्ते रखे और शुरू कर दिए सारे स्कूल के 10 चक्र, सारा स्कूल देख रहा था,स्कूल में पूरी बिल्डिंग न होने के कारण अधिकतर क्लासें बाहिर ही लगती थीं, चारों शर्म से पानी पानी हो रहे थे। 10 चक्र पूरे होने के बाद ही क्लासों में जा सके। Punctuality की दिशा में यह एक बहुत ही बड़ा लेसन था।

यह है उस महान आत्मा “हमारे पिताजी और हमारे शिक्षक” की शिक्षा जो आज तक हम में और हमारे बच्चों में जागृत हुई है। नमन करते हैं आदरणीय श्री धर्म पाल त्रिखा जी को।

हमारे द्वारा चलाए जा रहे “ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार” की नियमित एवम समर्पित सहकर्मी आदरणीय सुमनलता

बहिन जी का हृदय से धन्यवाद करते हैं जिनके कारण पुरानी यादें ताज़ा हो गईं।

पिताजी उस समय गवर्नमेंट हाई स्कूल बरवाल में हेडमास्टर थे। उन दिनों प्रथा थी कि जब भी कोई अच्छी शिक्षाप्रद फिल्म रिलीज होती तो सारा स्कूल अलग-अलग बैच में, थिएटर में फिल्म देखने जाता। उस समय (1960s) कठुआ ही सबसे नजदीक टाउन था जहां थिएटर थे। जिस फिल्म की बात बहिन जी ने हमारे यूट्यूब चैनल पर की, उसका नाम है "जागृति।" अनपढ़,शहीद,बूट पोलिश,धूल का फूल इत्यादि अन्य अनेकों फिल्में हम स्कूल से ही देखने गए थे।

हम इसी फिल्म को देखने कठुआ के किसी थिएटर में गए थे और इसके पीछे का प्रयास हमारे पिताजी का था।शायद पिताजी के हृदय में उस समय से ही गुरुदेव के विचार क्रांति अभियान के बीज अंकुरित थे क्योंकि बच्चे गीली मिट्टी की भांति होते है,उन्हें कैसे भी ढाला जा सकता है। कुम्हार अपनी कला से, हाथों के कमाल से भांति भांति के,रंग बिरंगे खिलोने बनाकर वाहवाही लूटता है। इन खिलौनों को हम अपने घरों में, ड्राइंग रूम में सजाते हैं, वाहवाही लूटते हैं, प्रसन्न होते हैं। पैसा कमाने के इलावा कुम्हार को अपनी कला की सराहना देखकर जो

आत्मिक शांति का आभास होता है उसे शब्दों में बांध पाना लगभग असंभव ही है।

एक अभिभावक, एक समर्थ शिक्षक,एक पिता भी बच्चों के लिए कुम्हार जैसा ही होता है। जीवनयापन, गृहस्थ के उत्तरदायत्व अपनी जगह सब महत्वपूर्ण हैं,उन्हें किसी भी कीमत पर नकारा नहीं जा सकता लेकिन विद्यार्थी-बच्चे की सफलता को देखकर, अभिभावक, शिक्षक-पिता को आंतरिक प्रसन्नता होती है,उसकी तुलना कुम्हार से करना, किसान को अपने लहलहाती फसल को देखकर प्रसन्न होने से करना अनुचित न होगा।

बार बार नमन करते हैं अपने पिताजी को, अपने हेड मास्टर जी को और हमारे मार्गदर्शक को जिनके कारण हमें उच्चस्तरीय संस्कार प्राप्त हो सके। गवर्नमेंट HIgh school बरवाल का नाम आजकल शहीद नायक योगराज हायर सेकेंडरी स्कूल हो गया है। हमने इंटरनेट सर्च के दौरान कुछ चित्र ढूंढ निकाले जिन्हें यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। इस स्कूल से सम्बंधित यूट्यूब पर भी कुछ वीडियोस अपलोड की गयी हैं जिनमें से एक का लिंक यहाँ दे रहे हैं।

इस स्कूल से संबंधित इतनी यादें हैं कि क्या कहें, देखते हैं एक-एक करके कहां तक हमारी स्मरण शक्ति हमसे लिखवा सकती है।

1.शायद 1966-67 की ही बात होगी जब हम 10वीं कक्षा के विद्यार्थी थे। बरवाल स्कूल में तो सुविधाएं इतनी कम थीं कि जम्मू कश्मीर शिक्षा बोर्ड का सेंटर बनना संभव ही न था। Theory के पेपर देने के लिए कठुआ कॉलेज में जाना पड़ता था। कठुआ के लिए Direct बस तो कोई नहीं जाती थी, जैसे-तैसे 3 किलोमीटर की पैदल यात्रा करके नेशनल हाईवे 44 तक पंहुचते थे जहां से कठुआ के लिए बसें मिलती थीं। 3 घंटे की परीक्षा के लिए लगभग सारा दिन ही खराब हो जाता था। यह तो हुई थ्योरी पेपरों का बात, प्रैक्टिकल के लिए 15 किलोमीटर दूर नगरी-पड़ोल नाम के गांव में सेंटर बनाया था। बरवाल स्कूल में तो सेंटर का होना संभव ही नहीं हो सकता था क्योंकि साइंस की लेबोरेटरी हमारे पिता जी ने कुछ वर्ष पहले आरंभ की थी, इसलिए पूरी तरह Equipped नहीं थी ।

पिता जी ने हमें साइकिल पर 15 किलोमीटर ले जाने का प्लान बनाया। पता नहीं उस दिन कितना समय लगा होगा, आज 2025 में गूगल 3 घंटे का समय बता रहा है।कैसे चलाया होगा

30 किलोमीटर साइकिल। 2-3 घंटे प्रैक्टिकल होता रहा और पिता जी बाहर वृक्ष की छांव में बैठे रहे।

यहां पर एक और बात शेयर करने योग्य है कि जैसे प्रैक्टिकल के लिए सिफारिश करने का प्रचलन है, अवश्य ही लोगों ने सिफारिश की भी होगी लेकिन पिता जी ने बिल्कुल ही नही कुछ कहा।

उस समय हमें भी अच्छा नहीं लगा था लेकिन आज समझ आ रहा है कि उन्होंने ऐसा क्यों किया था। वोह मुझे Self dependent, आत्मनिर्भर बना कर अपने पांव पर खड़ा कराना चाहते थे, और हुआ भी कुछ ऐसा ही।

22 वर्ष की आयु में अपनी जन्म भूमि को छोड़ कर विदेश में Settle होना, उन्हीं की शिक्षा का परिणाम है। नमन करते हैं।

जन्म तो हमारा कोलकाता के हिंदू हॉस्पिटल में हुआ था, लेकिन मात्र 2 वर्ष की आयु में ही कोलकाता छोड़ कर जम्मू आना पड़ा था। इसका कारण कुछ भी हो लेकिन सबसे बड़ा कारण पंजाबी-बंगाली भेदभाव ही था।

हमारे नाना जी, जो आयुर्वेद के जाने-माने विशेषज्ञ थे, सुप्रसिद्ध डाबर कंपनी में नौकरी करते थे। हमारे माता-पिता भी 1948 के आसपास उनके साथ कोलकाता शिफ्ट हो गए थे। हमारी बड़ी

बहिन, बड़े भाई और हमारा जन्म कोलकाता में होने के कारण कहा जा सकता है कि हमारे माता-पिता 4-5 वर्ष तो कोलकाता रहे ही होंगें।

जम्मू आने के बाद तो हम सब यहीं के ही होकर रह गए। वहीं पे हमारी सारी शिक्षा और नौकरी भी हुई और फिर हम कनाडा आ गए।

22 वर्ष की आयु में जम्मू यूनिवर्सिटी से MSc करने बाद, अमृतसर, पटियाला से PhD की डिग्री प्राप्त करने के बाद नौकरी और फिर कनाडा आना आत्मनिर्भरता का ही प्रमाण है।

आत्मनिर्भर बनाने वाले अनेकों संस्मरण हमारे जीवन के साथ जुड़े हैं जिनके लिए हम अपने पिता जी का धन्यवाद किए बिना नहीं रह सकते।

10 बजे से 4 बजे तक स्कूल की ड्यूटी पूर्ण श्रद्धा से निभाते हुए पिता जी प्राइवेट ट्यूशन भी करते थे। Math उनका फेवरेट विषय था और यही विषय सभी बच्चों के लिए कठिन भी था, इसलिए Math में ट्यूशन भी बड़ी ही पॉपुलर थी। आज भी याद है कि नौंवी/ दसवीं की कक्षा के बच्चे ट्यूशन के लिए उन्हीं पर भरोसा करते थे। उनके अनुभव के बारे में यह धारणा प्रचलित थी कि सवाल लिखने से पहले ही उत्तर बोल देते थे। यहां यह

बात भी वर्णन योग्य है कि पिता जी ने ट्यूशन अवश्य की लेकिन स्कूल की ड्यूटी में ज़रा सा खलल नहीं आने दिया।

लेकिन एक बात जो हमसे संबंधित है, यहां उसका वर्णन करना उचित है।

नौंवी/ दसवीं कक्षा की परीक्षा इक्कठी होती थी और यह बोर्ड की परीक्षा होती थी। उन्होंने हमें कभी भी ट्यूशन में अन्य बच्चों के साथ बैठने दिया,शायद इसलिए कि हमें सब आता है यां यूं कहें कि वोह हमें बहुत ही Intelligent समझते थे। शायद यह हमारी Intelligence ही थी कि हमने नौंवी कक्षा में दसवीं का सिलेबस पूरा कर लिया था।वोह कैसे? जब पिताजी दसवीं के बच्चों को ट्यूशन पढ़ाते थे तो हम बाहर बैठ कर नोट करते रहते थे।ऐसा करने से हमारे लिए दसवीं का सिलेबस बहुत ही आसान हो गया था, यही कारण था कि हम बोर्ड में पहले 10 की टॉपर लिस्ट में आए।

इसी आत्मनिर्भरता का परिणाम था कि हमारी सारी शिक्षा जहां तक कि PhD भी स्कॉलरशिप से ही हुई ।

बरवाल स्कूल से संबंधित कितने ही संस्मरण हैं, सभी को एक-एक करके वर्णन करना आरंभ कर दें तो एक अच्छा खासा ग्रंथ कंपाइल किया जा सकता है।

3. हमारे स्वर्गीय पिता जी (Sh DPTrikha) की पुरानी स्मृतियों में से एक यादगार। “सारी रात घर के बाहिर”

पिता जी को रंगमंच का बहुत ही शौक था। GGM साइंस कॉलेज जो उन दिनों प्रिंस ऑफ वेल्स कॉलेज के नाम से प्रसिद्ध था, पिता जी का कॉलेज हुआ करता था। अपने विद्यार्थी जीवन में इस कॉलेज की स्टेज पर न जाने कितने ही नाटक किए होंगें। किसी क्षेत्र में रुचि होना एक बात है लेकिन उस क्षेत्र में दक्ष होना दूसरी बात है।

बहुत प्रयास किया कि पिताजी की सनातन धर्म नाटक समाज की स्टेज से महाराज दशरथ /जनक के रोल वाली कोई फोटो मिल जाती लेकिन असफलता ने एक और अमूल्य एवं दुर्लभ फोटो दिखा दी। यह फोटो 1944 में स्टेज हुआ नाटक “यहूदी की लड़की” के पात्रों का है। यह

नाटक 1933 की बॉलीवुड फिल्म पर आधारित था। गवर्नमेंट गाँधी मेमोरियल साइंस कॉलेज का नाम उन दिनों Prince of Wales College हुआ करता था। पिताजी इस नाटक के असिस्टेंट डायरेक्टर थे और दूसरी लाइन में बाएं से तीसरे नंबर पे खड़े हैं।

82 वर्ष पुरानी, 1943 की इस फटी पुरानी ग्रुप फोटो में रंगमंच के सुप्रसिद्ध नाटक “यहूदी की लड़की” की टीम दिखाई दे रही

है। इस टीम में पिता जी डायरेक्टर की भूमिका में अग्रिम पंक्ति में बैठे हैं। फोटो के एक कोने में नीली सियाही वाले पैन से लिखा हुआ है “यह फोटो राम कुमार अबरोल ने डी पी त्रिखा को प्रेजेंट की थी” राम कुमार अब्रोल के नाम से भला जम्मू निवासी कैसे अपरिचित रह सकते है? राम कुमार अब्रोल, 1966 में, डोगरी भाषा में बनी पहली बॉलीवुड मूवी “गल्ला होयियां बीतियां” के नायक थे,कुमार कुलदीप इसके डायरेक्टर थे।

इसी फोटो में बॉलीवुड की प्रसिद्ध हस्तियां भी दिख रही हैं।

पिता जी ने कॉलेज के दिनों से ही रुचि के साथ-साथ नाटकों में ऐसी दक्षता प्राप्त कर ली कि जम्मू की दिवान मंदिर स्थित सनातन धर्म नाटक समाज में सबसे निम्न स्तर के स्टेज सेट करने के कार्य से लेकर उच्चस्तरीय कार्य (निर्देशक) तक के सारे कार्यों में दक्षता दर्शाना उन्हें ही प्रदान हुआ। उस नाटक क्लब में दशरथ, जनक आदि की भूमिकाएं कई वर्षों तक पिता जी ही निभाते रहे और वाहवाही लूटते रहे। रामलीला के दिनों में जब जम्मू नगर की गलियों में भगवान राम, लक्ष्मण और माता जानकी की झांकियां निकलती थीं तो लोगों का सैलाब पुष्पों की वर्षा करते नहीं रुकता था।

सनातन धर्म नाटक समाज मंडली एवम यही वोह स्टेज थी जहां से अनेकों प्रतिभाएं निकल कर आईं जिन्होंने बॉलीवुड में अपना विशेष स्थान बनाकर जम्मू नगर का नाम रोशन किया।

प्रसिद्ध गायक कुंदन लाल सहगल, कैरेक्टर एक्टर ओम प्रकाश, “जब जब फूल खिले” के प्रसिद्ध डायरेक्टर ब्रिज कत्याल,लेखक यश शर्मा समेत कितने ही प्रतिभाशाली व्यक्तित्व इस नाटक क्लब की ही देन हैं।

1904 में जम्मू में जन्में कुंदन लाल सहगल इसी नाटक क्लब में सितार बजाया करते थे, दुर्भाग्यवश उनका देहांत बहुत ही छोटी आयु, 42 वर्ष में ही हो गया था।

1919 में जम्मू में ही जन्में ओम प्रकाश को कैरेक्टर एक्टर के रोल में कौन नहीं जानता। पिता जी से सुना था कि ओम प्रकाश दीवान मंदिर की स्टेज पर सीता का रोल किया करते थे।

बृज कत्याल जी के बारे में पाठकों को आने वाले पन्नों तक प्रतीक्षा करने होगी लेकिन चलते-चलते यह बताना अनिवार्य समझते हैं कि जब पिता जी छन रोरियां में कार्यरत थे तो कत्याल जी के भतीजे रमेश कत्याल उसी गांव में ओवरसीयर बन कर आए थे। बृज जी के साथी होने के कारण रमेश जी को उस अनजान गांव में कोई नहीं जानता था और पिताजी एक Caretaker की भांति मिल गए थे। बृज कत्याल का 85 वर्ष की

आयु में मुंबई में कैंसर से देहांत हो गया था। वह किसी गुमनाम Hospice में Rectal cancer से युद्ध करते इस दुनिया को अलविदा कह गए थे।

रमेश कत्याल से जुड़ी भी एक रोचक कहानी स्मरण आ रही है,जो निम्नलिखित है:

रमेश बहुत ही खूबसूरत युवक थे तो खूबसूरत कन्याओं का उनका पीछा करना स्वाभाविक था। इसी स्वाभाविकता के वशीभूत एक ऐसी कन्या उनके पीछे पड़ गई जिसे शायद तांत्रिक विद्या, भूत-प्रेत आदि का ज्ञान था। उसने रमेश जी के घर आना जाना शुरू कर दिया। यह आना जाना इस स्थिति तक पंहुच गया कि उस कन्या ने रमेश जी को पूरी तरह से अपने वश में कर लिया और भूतों जैसे दृश्य भी दिखाने शुरू कर दिए। हद तो तब हो गई जब रमेश जी ने पिताजी के पास आकर सारी व्यथा का वर्णन करते हुए सहायता की मांग की, रमेश जी पिताजी को अपना लोकल गार्डियन जो मान चुके थे। पिताजी तो भूत-प्रेतों को मानते नहीं थे लेकिन जो उन्होंने उस दिन देखा, शायद उन्हें भी विश्वास हो गया कि भूत जैसी कोई वस्तु अवश्य होती है।

तो आइए देखते हैं उस दिन पिता जी ने क्या देखा:

वोह लड़की, जो रमेश जी को अपने करतबों से कई बार डरा चुकी थी, उनके निवास से दूर Dam पर आने को कहती है।रमेश जी ने पिताजी को साथ आने का आग्रह किया ताकि उस पर काबू पाया जा सके। दोपहर 12 बजे का समय रहा होगा, दोनों निश्चित स्थान पर पंहुचे, उसने अपना जादू टोना दिखाना शुरू किया। कुछ बातचीत भी हुई होगी, इसी बीच उस लड़की ने अपनी भूतहा शक्ति दिखाने के लिए रमेश जी से किसी Bowl में पानी लाने को कहा और उसमें हाथ की उंगलियां डुबोने को कहा। रमेश जी और पिताजी दोनों ही देखकर हैरान रह गए कि उंगलियां डुबोने पर Bowl का पानी खून जैसा लाल हो गया और उसमें मांस के छोटे-छोटे टुकड़े तैरने लगे। उंगलियां बाहर निकालते ही लाल पानी नॉर्मल पानी की तरह हो गया।

इस घटना से कोई भी निष्कर्ष निकाला जाए लेकिन पिताजी ने भूतों पर विश्वास करना आरंभ कर दिया क्योंकि उसके बाद ही एक और घटना हुई जिसमें पिता जी ने भूतों का ही हाथ बताया।

रमेश जी को पिताजी की सहायता मिली, उस कन्या का क्या हुआ, कुछ स्मरण नहीं है।

बाद वाली घटना कुछ ऐसी थी:

गर्मियों के दिन थे, हम सपरिवार छत पर सोए थे। स्मरण नहीं रात का क्या समय होगा, हमारे बड़े भाई साहिब ने छत से नींद में ही छलांग लगा दी। उन्हें नींद में चलने की आदत थी। इसी आदत ने उन्हें दो मंजिला छत से नीचे पड़ोस के किसी घर में गिरा दिया। लकड़ी के बड़े से पीस पर गिरने से उनकी टांग में भारी चोट आ गई थी। भाई साहिब के गिरने से, कराहने की आवाज सुनकर पिताजी जी भागते-भागते पड़ोस के घर गए और उन्हें कंधे पर उठा कर ले आए।

रमेश जी की घटना के बाद यही वोह घटना थी जिसने पिताजी को भूतों पर विश्वास करने पर विवश कर दिया था। जब पिताजी पड़ोस के घर से भाई साहिब को उठाने जा रहे थे तो उन्होंने घर की मालकिन, बूढ़ी अम्मा को घबराहट में इधर-उधर चलते एवम कुछ बुदबुदाते सुना था। पिताजी ने ऐसा दृश्य देखने के बाद ही निष्कर्ष निकाला था कि यह उसी का काम है नहीं तो उसे घबराहट क्यों।

जम्मू से बरवाल तक की यात्रा में बिशनाह और छन्न रोडिया के दो पड़ाव भी पिता जी के सर्विस काल के प्रसिद्ध पड़ाव थे। बरवाल स्कूल में अन्य अनेकों प्रतिभाओं के साथ साथ रंगमंच में अपनी दक्षता कायम रखी। स्कूल में ही स्टाफ और विद्यार्थियों के साथ रामलीला तो अनवरत होती रही, साथ ही में अनेकों

नाटक भी किए जिनके निर्माता, निर्देशक, कहानीकार, एक्टर आदि की सभी भूमिकाओं को पिता जी ही बखूबी निभाते रहे।

पिता जी के अंतिम दर्शन भी न हो पाए

1997 में पिताजी का जम्मू नगर में, जहाँ जीवन का अधिकतर समय व्यतीत किया था, देहांत हो गया लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि दोनों भाइयों ने जो मृत्यु के समय उनके पास थे मुझे कनाडा में बताना तक ज़रूरी नहीं समझा। मृत्यु के समय मैं University of Windsor, Canada में कार्यरत था,परिवार भारत में होने के कारण मैं इस देश में बिलकुल अकेला ही था। पिता की मृत्यु को अकेले ही सहन करना, इस स्थिति का अनुभव तो उसे ही हो सकता है जो उसमें से गुज़र रहा हो। ऑफिस में आकर सहकर्मियों से दुःखित हृदय से बात की तो एक ब्रिटिश Researcher, Samantha जो हमारे ही ग्रुप में ही रिसर्च कर रही थी, कह कर सांत्वना देने लगी कि “तुम्हारे पापा मम्मी के पास चले गए हैं, उनके साथ मिल गए हैं।”

अब यहाँ बात आती है कि मुझे पिताजी की मृत्यु का कैसे पता चला। बात 1997 जुलाई की रही होगी, मैं University of Windsor से पीटर स्ट्रीट स्थित निवास पर कुछ आवश्यक फ़ोन करने आया। यह वोह दिन थे जब न तो मोबाइल फ़ोन का इतना प्रचलन था और न ही व्हाट्सप्प जैसी सुविधा थी जिससे

फ्री में जितना जी चाहे फ़ोन करते रहो। वोह लैंडलाइन के दिन थे और फ़ोन करना बहुत ही महंगा था। यहाँ एक बात और बताना आवश्यक है कि नोर्मली मैं यूनिवर्सिटी से इस समय घर आता ही नहीं था,सुबह एक बार निकल गए तो रात को ही वापिस आता था, अकेले जो था, परिवार-बच्चे तो इंडिया में ही थे।

चलो आगे बढ़ें, फ़ोन करने आए तो क्या हुआ।

मैंने आवश्यक फ़ोन खत्म किया तो मन हुआ की इंडिया में परिवार की जानकारी ली जाए। दोपहर का समय था और इंडिया में रात होगी, उचित समय समझ कर परिवार की जानकारी प्राप्त करने पटियाला फ़ोन मिलाया। हमारी मम्मी (सास जी)ने फ़ोन रिसीव किया, झिझकते मन से हमें पूछने लगे कि आपको पता नहीं ? हमने कहा,किस बात का ? उन्हें पता चल गया कि हमें पिता जी के देहांत का बताया नहीं हुआ है। तो उनके पास इस दुःखद समाचार को बताने के सिवा और कोई विकल्प नहीं था। उन्होंने बता दिया कि आपके पिता जी इस दुनिया में नहीं रहे। हमारी पत्नी नीरा छोटे बेटे को जो उस समय एक अबोध बालक था,लेकर जम्मू रवाना हो चुकी था। मम्मी जी, हमारी पत्नी के अकेला होने के कारण जम्मू से पटियाला रहने आई थीं।

डेली एक्सेलसियर की न्यूज़ आइटम:

आज गूगल सर्च के दौरान एक ऐसी न्यूज़ आइटम सामने आयी जिसने हमें गौरान्वित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। न्यूज़ आइटम डेली एक्सेलसियर समाचार पत्र 2015 में प्रकाशित हुई थी। सारी की सारी न्यूज़ जम्मू निवासी रघुनंदन सिंह बाली जी के बारे में थी। क्योंकि यह आइटम जम्मू के बारे में थी जहाँ कभी हमने अपने यौवन के अमूल्य पल बिताये थे, वोह गलियां, कॉलेज और यूनिवर्सिटी एक दम एक न्यूज़ रील की तरह रिवाइंड होती चली गयी। हम पढ़ते ही गए ,पढ़ते ही गए जब एक दम अपने पापा (पिताजी) का नाम देखा तो बार -बार उन पंक्तियों को पढ़ते ही गए। यह न्यूज़ आइटम डेली एक्सेलसियर के प्रसिद्ध Columnist डॉक्टर ललित गुप्ता जी की कलाकृति थी। हम डॉक्टर ललित गुप्ता जी के आभारी हैं जिन्होंने जम्मू के महान व्यक्तित्व श्री रघुनंदन सिंह बाली जी के बारे में एक महान पोस्ट प्रकाशित की और इससे भी बड़ी बात यह है कि आदरणीय बाली जी ने अपनी सफलता का श्रेय हमारे स्वर्गीय पिता आदरणीय श्री धर्म पाल त्रिखा जी को दिया।

बात दरअसल 1956 की है जब रघुनन्दन जी हरि सिंह हाई स्कुल जम्मू में आठवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। हमारे पिता जी इस स्कूल में अध्यापक थे और उन्होंने रघुनंदन बाली जी की प्रतिभा

देखते हुए आगा हशर कश्मीरी के नाटक “श्रीमती मंजू देवी” के लिए चयन किया।

इसी प्रकार का एक और News Column डॉक्टर ललित जी ने 2018 में सुप्रसिद्ध बॉलीवुड कहानीकार ,डायरेक्टर स्वर्गीय ब्रिज कत्याल को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा। ब्रिज कत्याल जी का नाम 1965 की सुपरहिट मूवी “जब जब फूल खिले” में इतना प्रसिद्ध हुआ कि थिएटर के मालिक ने ब्रिज जी को एक ब्रांड नई कार और 50000 रुपए इनाम के तौर पर दिए। इस News Column में भी हमारे पिताजी आदरणीय धर्म पाल त्रिखा जी का नाम ब्रिज कत्याल जी और उनकी टीम के साथ बतौर निर्देशक दर्शाया गया है। उनकी टीम में और मंझे हुए कलाकार राम कुमार अब्रोल ,बंसी केरनी, दीनू भाई पंत के साथ और कई मंजे हुए कलाकार थे। यही टीम थी जिसने डोगरी भाषा में प्रथम बॉलीवुड मूवी “गल्लां होइयाँ बीतियाँ” को जन्म दिया। यह फिल्म 1966 में रिलीज़ हुई।

इन पंक्तियों में हम अपने स्वर्गीय पिताजी श्री धर्म पाल त्रिखा जी को श्रद्धांजलि तो दे ही रहे हैं, साथ में उनके उच्स्तरीय व्यक्तित्व को भी दर्शा रहे हैं ताकि आने वाली पीडियाँ जब गूगल में सर्च करें तो उन्हें पिताजी के व्यक्तित्व का आभास हो सके।

पचास के दशक में केवल 40 रूपये प्रति माह के वेतन से शिक्षा के क्षेत्र में अपना जीवन आरम्भ करने वाले हमारे पिताजी को नमन है जो जम्मू कश्मीर राज्य (वर्तमान केंद्र शासित प्रदेश) के शिक्षा विभाग में उच्च पदवियों पर सेवामुक्त हुए। यह इंटरनेट की शक्ति ही है जिसने आज 60-70 वर्ष के बाद भी हमारे पिताजी को जीवित रखा हुआ है। शिक्षा के क्षेत्र में उच्चस्तरीय अनुशासन का पालन करना, स्कूल में अध्यापकों और विद्यार्थियों में भी अनुशासन की प्रथा डालनी कोई सरल कार्य नहीं था। कई बार विरोध का भी सामना पड़ा लेकिन वह अपने संकल्प से टस से मस नहीं हुए।

बिल्कुल इसी प्रकार की अनुभूति कुछ वर्ष पूर्व भी हुई थी जब हम कनाडा से भारत के प्रवास पर थे। गांधीनगर में हमारे ससुराल थे ,हमारे डैडी जी (ससुर) एक दिन हमें स्वर्गीय यश शर्मा जी से मिलाने उनके निवास पर ले गए। हमने आदरणीय यश शर्मा जी को तो पहली बार ही देखा था लेकिन सुना बहुत था। उन दिनों वह लगभग बिस्तर पर ही रहते थे लेकिन बातचीत, समरणशक्ति में कोई भी कमी न दिखाई दी थी। हमने कैमकॉर्डर से वीडियोस भी शूट की थीं।

यश शर्मा कई पुरस्कारों से सम्मानित रेडियो कश्मीर जम्मू में एनाउंसर के पद पर कार्यरत रहे। उनकी आवाज से हर

जम्मूवासी परिचित है। उनकी पत्नी आदरणीय रक्षा शर्मा जी ने “सहयात्रा” शीर्षक से एक पुस्तक लिखी थी जिसमें यश शर्मा जी ने हमारे पिताजी को अपना “गुरु” कह कर सम्मानित किया था। रक्षा जी ने हमें इस पुस्तक की प्रति भेंट करके समान्नित किया और गर्व महसूस किया कि Canada में रह कर भी हमनें अपनी मातृभूमि को अपने अन्तःकरण में सम्मान दिया हुआ है। इस पुस्तक के बारे में रक्षा जी ने हमें बताया कि यश शर्मा जी तो उस समय लिखने की स्थिति में नहीं थे लेकिन “वह बोलते गए और मैं लिखती गयी”, ऐसे अद्‌भुत तरीके से इस अद्‌भुत पुस्तक “सहयात्रा” की रचना हुई थी

1. मातृ -पितृ ऋण

वर्ष में चार दिन ऐसे होते हैं जब हम अपने माता पिता को बड़े ही चाव और लोकाचार से स्मरण करते हैं। यह चार दिन हैं फादर्स डे, मदर्स डे और उनके जन्मदिन। शायद कुछ लोगों के लिए और भी दिन जैसे मैरिज अंनिवर्सरी इत्यादि भी हों लेकिन यह चार दिन मुख्य हैं। क्या यह चार दिन याद करके हम अपने माता पिता के प्रति अपना कर्तव्य पूरा कर लेते हैं। मातृ-पितृ ऋण को पूरा करने के लिए कई जन्म हो जाएँ फिर भी शायद अधूरा ही रहे।

मेरे जीवन के सम्बन्ध में तो यह कहना शायद अतिश्योक्ति न हो कि मेरे पिता मेरे जीवन में दो रूप में आये -एक पिता के रूप में जिनके कारण मैं इस संसार में आ सका और दूसरे “एक गुरु” के रूप में जिसने ऊँगली पकड़ कर जीवनयापन के सभी साधन और योग्यता प्रदान करवाई। छोटे बच्चों से लेकर यूनिवर्सिटी के बच्चों तक हम यही कहते रहे- माता पिता हमें इस संसार में लाते हैं और गुरु हमें इस संसार में जीने का मार्ग दिखाते हैं। कितना सौभाग्यशाली हूँ मैं जिसे “एक ही इंसान में दो रूप मिले।” माँ का स्थान पिता के स्थान से कभी भी कम न रहा, न रहेगा लेकिन क्या पिता का स्थान माँ के स्थान से कम रहेगा-कभी नहीं, दोनों ही एक दूसरे के इसी प्रकार पूरक हैं जैसे हमारे ज्ञानरथ के चार पहिये।

कुछ समय पूर्व अपने पैतृक घर जहाँ मैंने यौवन के अमूल्य 7-8 वर्ष व्यतीत किये थे,जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। माता पिता का तो स्वर्गवास हो गया था ,घर में दो छोटे भाई और उनके परिवार रहते थे। एक दम आँखों के आगे 8x 8 फ़ीट की वह कोठरी चलचित्र की भांति घूम गयी जिसमें एक चरपाई पर बैठ कर सारी-सारी रात केमिस्ट्री के फॉर्मूले याद किये थे, बायोलॉजी की डार्विन थ्योरी को रट्टे लगाए थे। इसी कोठरी में बुखारी पर एक लकड़ी का संदूक होता था जिसमें हमारे पिताजी ने सालों पुरानी

फोटो ,ग्रुप फोटो बड़ी ही श्रद्धा और सम्मान से संभाल कर रखी थीं। दो कमरों का एक छोटा सा घर था जिसमें माता पिता समेत हम पांच भाई बहिन रहते थे। मुझे आदत थी सारी-सारी रात पढ़ने की, तो मैंने अपने भाईयों और बहिन से लड़कर इस कोठरी पर कब्ज़ा कर लिया। बाद में फिर M.Sc में तो लाइब्रेरी में जाकर पढ़ना शुरू कर दिया।

हाँ तो बात आती है उस लकड़ी के संदूक में संभाल कर रखी फोटोओं की।

हमारे मन में आया कि न माँ है न पिता जी, तो न जाने इन फोटोओं का क्या होगा, हमने अपने भतीजे (जिसका हम धन्यवाद् करते हैं) को कहा कि इन सभी फोटोज के स्क्रीनशॉट लेकर मुझे ईमेल कर दे। उसने मुझे लगभग 30 बहुमूल्य फोटो भेजीं जो मेरे लिए किसी सोने की खान से कम नहीं हैं, इनमें से कुछ तो 90 वर्ष पुरानी हैं जो मेरे पिताजी की प्रतिभा को दर्शाती हैं। इसी कोष में से चुन कर कुछ फोटो अपने स्वर्गवासी पिताजी श्री आदरणीय धर्म पाल त्रिखा जी को श्रद्धांजलि सुमन के रूप में प्रस्तुत हैं ।

2. A heart touching event about my father Sh DP Trikha.

“बेटा जी मास्टर आया है” हमारे पिताजी के करियर की एक मार्मिक कथा - पितृ ऋण

बात शायद 50 के दशक की होगी लगभग 75 वर्ष पुरानी। हमारे पिताजी स्वर्गीय आदरणीय धर्म पाल त्रिखा एक मामूली अध्यापक के पद पर जम्मु के विख्यात स्कूल श्री रणबीर हायर सेकेंडरी स्कूल में कार्यरत थे। इस स्कूल की ख्याति जानने के लिए आप विकिपीडिया जा सकते हैं, आप देख सकते हैं कि किन-किन हस्तियों के कारण इस स्कूल का नाम विश्व भर में प्रसिद्ध है, सुप्रसिद्ध गायक स्वर्गीय कुंदन लाल सहगल इसी स्कूल के विद्यार्थी थे।

स्कूल के गुणगान को यही छोड़ते हुए हम आपको ले चलते हैं उस अतिमार्मिक, दिल को छू लेने वाले दृष्टान्त की ओर जिसे पढ़कर बहुत से पाठकों के हृदय में एक आत्मसम्मान की अनुभूति तो अवश्य ही जागेगी, साथ में Bureaucracy के प्रति एक अग्नि भी प्रज्वलित होगी। स्वर्गीय पिताजी ने यह मार्मिक दृष्टान्त कई बार हमारे साथ शेयर किया होगा शायद इसी कारण हमारी प्रवृति भी अन्याय के समक्ष न झुकने की बन गयी।

पिता जी चाहे मामूली अध्यापक थे लेकिन Math में वह इतने निपुण थे कि सारे जम्मु में उनका डंका बजता था। जम्मू कश्मीर गवर्नमेंट में कार्यरत चीफ सेक्रेटरी साहिब को अपने बेटे के लिए

ट्यूशन की आवश्यकता महसूस हुई। उन्होंने रणबीर स्कूल के प्रिंसिपल श्री राम लाल बड़गोत्रा से संपर्क किया और कहा कि अपने स्कूल में से जो बेस्ट टीचर है उसे हमारे घर बेटे को ट्यूशन के लिए भेज दें। बड़गोत्रा साहिब की नज़र में हमारे पिताजी से बढ़कर कोई भी टीचर नहीं था, उन्होंने चीफ सेक्रेटरी साहिब के बेटे की ट्यूशन का प्रस्ताव रखा। पिताजी ठहरे निर्धन बच्चों की सेवा करने वाले, चीफ सेक्रेटरी का नाम सुन कर पहले तो उन्होंने न ही कर दी लेकिन बाद में न करने में असमर्थ रहे क्योंकि बड़गोत्रा साहिब हमारी स्वर्गीय माता जी के चाचा थे। पिताजी जुलाका मोहल्ला स्थित चीफ सेक्रेटरी साहिब के घर में बेटे को ट्यूशन देने जाते रहे। लेकिन उनके ह्रदय में एक टीस सी हर वक्त उठती रही क्योंकि इस घर में उनके साथ नौकर की तरह बर्ताव किया जाता था। शिक्षक का सम्मान करना हमारा सबसे बड़ा धर्म है। जिनको हम Nation builder से सम्बोधन करते हैं, क्या इन So called बड़े लोगों के दिलों में भी यही सम्मान है। एक तरफ नौकरी, दूसरी तरफ रिश्तेदारी, पिताजी अपने आप को दुविधा में फंसा समझ रहे थे। हद तो तब हुई जब एक दिन पिताजी ने डयोढ़ी के दरवाज़े पर दस्तक लगाई तो चीफ सेक्रेटरी साहिब की पत्नी ने आवाज लगाई,“बेटा जी, मास्टर आया है” बेटे को “जी” और शिक्षक को “आया है।” पिताजी ने तभी निश्चय कर लिया कि आज बेटे को

पढ़ाने का अंतिम दिन था। एक शिक्षक की इतनी ज़िल्लत, और वह भी एक पढ़े लिखे परिवार द्वारा। यही चीफ सेक्रेटरी कहीं चीफ गेस्ट बन कर जाएँ तो शिक्षकों के सम्मान में क्या कुछ नहीं कहते। वाह रे, दो तरफ़ा लोग। ऐसे उच्च पदवियों पर बैठे लोग समाज का मार्गदर्शन कर रहे हैं।

पिताजी उस दिन के बाद पढ़ाने तो नहीं गए लेकिन, मन में एक टीस सी उठती रही थी कि ऐसे लोगों को कैसे ठीक किया जाये, कैसे सबक सिखाया जाये। एक साधारण से अध्यापक के हाथ में है भी क्या था!!! लेकिन जिसके अंतःकरण में आत्मसम्मान, निष्ठा और कर्तव्यपरायणता कूट-कूट कर भरी हो भगवान भी उसी के साथ होते हैं।

शिक्षा के साथ ही पिताजी के पास लेखक,आर्टिस्ट, ड्रामाटिस्ट, डायरेक्टर,रंगमंच इत्यादि बहुत सारी प्रतिभाएं थीं। रंगमंच शायद हमारे परिवार में परमपिता का वरदान था। हमारे पिताजी,चाचा जी,भाई,चचेरा भाई और हम खुद किसी न किसी रूप में रगमंच/बॉलीवुड से जुड़े रहे हैं। आज भी हमारे चाचा जी का बेटा बॉलीवुड में डायरेक्टर है। इसी प्रतिभा का लाभ लेते पिताजी ने इस घटना पर आधारित एक नाटक लिख डाला। नाटक का नाम शायद “अँधेरा-उजाला” था। इस नाटक का स्वयं ही निर्देशन किया और जहाँ बड़गोत्रा साहिब के कहने पर

पढ़ाने को गए थे वहीँ उनसे सहायता लेते हुए रणबीर स्कूल के प्रांगण में यह नाटक स्टेज किया। नाटक में निर्देशन के इलावा अध्यापक का रोल भी पिता जी ही कर रहे थे। स्कूल की प्रतिभा का बखान हम पहले भी कर चुके हैं, ऐसे स्कूल में कौन चीफ गेस्ट नहीं आना चाहेगा। चीफ सेक्रेटरी को सपरिवार आमंत्रित किया। बहुत ध्यान से देख रहे चीफ सेक्रेटरी परिवार के चेहरे के रंग देखने वाले थे जब वही डायलाग नाटक में बच्चे का माँ बोलती है "बेटा जी मास्टर आया है।" अवश्य ही हवाइयां उड़ी होंगीं। हमारे पाठक समझ गए होंगें कि वहां पर किस तरह का वातावरण बना होगा और किन मानवीय मूल्यों का वितरण हुआ होगा।

यह है एक शिक्षक के आत्मसम्मान की मार्मिक कथा।

आज एक बार फिर अपने पिताजी की स्मृतियों को जागृत करने हेतु ह्रदय में एक टीस सी उठ रही है। दरअसल मुख्य उदेश्य अपनी टीस को शांत करने का है, और अहसान डाल रहे हैं मातृ- पितृ ऋण चुकाने का। मातृ पितृ ऋण कभी भी चुकाया जा सकता है क्या? कदापि नहीं। लगभग पांच दशक घर से दूर, माता पिता से दूर रहकर -इस तरह की टीस उठना तो स्वाभाविक ही है। आज इंटरनेट के युग में, प्रगति के युग में हम अपने पूर्वजों को जीवित रखने का प्रयास कर रहे हैं। उनके

समय तो इंटरनेट की तो बात कहाँ ,टेलीफोन तक तो थे नहीं। हरे रंग के अंतर्देशीय लेटर्स ही हुआ करते थे यां पीले रंग के जवाबी कार्ड। पत्र लिखना ही सम्पर्क का एकमात्र साधन होता था जिसमें उत्तर आने में कभी-कभी एक महीना भी लग जाता था। उन दिनों की तुलना आज के युग से करने पर हमने सोचा कि क्यों न पूर्वजों की स्मृतियों को समेटा जाये ताकि भावी पीढ़ी को भी उसकी विरासत का ज्ञान प्राप्त हो सके। आज जम्मू स्थित सनातन धर्म नाटक समाज दीवान मंदिर की एक घटना शेयर कर रहे हैं ,आशा है आप भी इसकी रोचकता का आनंद उठाएंगें।

हमारे पिता जी सनातन धर्म नाटक समाज दीवान मंदिर नाटक क्लब द्वारा आयोजित रामलीला में भी रोल करते थे और इस क्लब के मुख्य कार्यकर्ताओं में से एक थे। 153 वर्ष पुरानी इस ऐतिहासिक क्लब के बारे में कुछ भी कहने में हम बिलकुल असमर्थ हैं। इस नाटक क्लब ने बॉलीवुड के कई कलाकारों को जन्म दिया जिनमें से सुप्रसिद्ध गायक/कलाकार/अभिनेता कुंदन लाल सहगल, कॉमेडियन ओम प्रकाश ,गायक यश त्रिखा (हमारे चाचा जी) और निर्माता निर्देशक ब्रिज कत्याल कुछ नाम हैं। ब्रिज कत्याल अपनी सुपरहिट मूवी “जब जब फूल खिले” के लिए बहुत ही प्रसिद्ध रहे। ब्रिज कत्याल की टीम में राम कुमार

अब्रोल ,बंसी केरनी, दीनू भाई पंत और कई मंजे हुए कलाकार थे। यही टीम थी जिसने डोगरी भाषा में प्रथम बॉलीवुड मूवी “गल्लां होइयाँ बीतियाँ” को जन्म दिया। यह फिल्म 1966 में रिलीज़ हुई। एक News Column में हमारे पिताजी का नाम ब्रिज कत्याल जी और उनकी टीम के साथ बतौर निर्देशक दर्शाया गया है।

अपने पिता जी के बारे में अगर हम कहें कि वह इस क्लब में निर्देशक थे तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। हमें भी उन दिनों की कुछ कुछ बातें याद आती हैं, चाहे हमारी आयु केवल 5 -6 वर्ष की ही होगी। कच्ची छावनी मोहल्ला में चोपड़ा हाउस में हम किराये के मकान में रहते थे। माता जी घर गृहस्थी में सुबह से रात तक व्यस्त रहती थीं और फिर छोटे-छोटे चार भाई बहनों को सँभालना कोई आसान कार्य नहीं था। पिताजी सुबह से शाम तक सम्पूर्ण निष्ठा से स्कूल में ड्यूटी देते, फिर ट्यूशन और फिर सारी रात नाटक। रामलीला से कई सप्ताह पूर्व ही रिहर्सल शुरू हो जाती थी और हमारा पिताजी जी से मिलना न के बराबर हो जाता था। माता जी कई बार अति व्यस्तता के कारण घबरा कर दुःखी भी हो जाती थीं।

एक बार की घटना याद आती है कि हम बच्चों ने पिताजी को कई दिनों से देखा नहीं था। रामलीला के दिन थे,रात को देर से

आते थे, हम सोये होते थे और सुबह जल्दी ही स्कूल चले जाते थे। माताजी एक बार इतने दुःखी थे कि उन्होंने बाहिर का द्वार ही नहीं खोला और पिताजी को सारी रात बाहिर सर्दी में ही गुज़ारनी पड़ी थी।

ऐसा था हमारे पिताजी का जनून। यह जनून केवल नाटकों के लिए ही नहीं बल्कि पढ़ाने के लिए भी ऐसा ही था। जब वह मुख्याध्यापक बन गए तो हर वर्ष स्कूल का 100 % रिजल्ट लाना उनका संकल्प था। इस संकल्प को पूर्ण करने के लिए उन्होंने जी जान से कार्य करने की ठानी थी। जब हम 10वीं कक्षा के विद्यार्थी थे तो अध्यापकों की कमी के कारण तीन सब्जेक्ट Math ,Science और English उन्होंने ही पढ़ाए थे ,यही कारण है कि हम जम्मू कश्मीर बोर्ड में पोजीशन और स्कालरशिप से उत्तीर्ण हुए। धन्यवाद्

https://m.facebook.com/story.php?story_fbid=pfbid025JJEtZ2qCVw5DeTKycqd7mm8CHenqbnzsEYRu46hA3wvf7bBpbqBhKBkH1tnT4Url&id=100000587756601&mibextid=Nif5oz

4.We are thankful to Lalit Gupta who published a great account of this great person from Jammu Raghunandan Singh Bali and even greater is THAT HE WAS SELECTED BY MY FATHER SHRI DP

TRIKHA IN 1956 when he was an 8th standard student.

This news item is shared in the original form which was published in Daily Excelsior in 2015. Proud to be your son,I am Dr Arun Trikha

---

Dr Lalit Gupta

In times when there is hue and cry about dismal standards of government runs schools in the state, it will be very difficult for present generations to visualize that around 1950s and 60s, government schools were not only vying with each other for academic excellence of their students but also conducted regular calendar of various cultural activities to hone the budding talent.

Raghunandan Singh Bali, is one such example who after being encouraged by his school teachers in the field of drama, not only made acting a lifelong passion but also influenced many a young person to take up the creative hobby.

The seventy three years old tall, fair and handsome, in a chance meeting is bound will make you take

notice of him. His somber expression along with fluent gestures and body movements gives one the feeling that he is at home everywhere. It was due to this very natural gift that right from his school days he was picked up as a one of the lead participants in cultural programs that included dance and drama skits etc. Once he had tasted the thrill of performances during national festivals like Republic and Independence Day Parades, school and inter-school competitions coupled with recognition and encouragement of his talent by his teachers and even the political elite of the state, Raghunandan Singh Bali knew theatre acting was going to be his lifelong obsession With the result since last fifty years, the field of culture has been an inseparable adjunct of his life. Serving in various capacities as a teacher, headmaster and principal of a number of schools where he was posted,he has been instrumental in galvanizing their cultural activities. But it was his skill as an amateur stage, Ramlila, TV and film actor that he has regaled generations of audiences and touched the lives of many young persons who after being encouraged and tutored by

him also took to theater seriously and formed many drama groups.

Born in 1942, to the Mirpuri refugee family of Balwant Singh and Janaki Devi, who after Partition made Jammu their home, Raghunandan Singh Bali did a lot of struggle to build life from scratch. Brought up in conservative family, sustaining passion for theater has not been an easy affair for him. It was the inherited artistic traits from his mother who was fond of singing and a much sought after character for the ‘swangs’ done by women folk during marriages, that fructified as a natural inclination for dance and acting in him.

Being brought up and schooled in Julahaka Mohalla, Jammu, in 1950s, Bali like other kids was always excited about Ramlila performances held at Diwan Mandir. He along with a group of few friends would often create a makeshift stage on the rooftop with a cot and bed sheets to enact scenes and battles of rakshas which they had seen a night before. It was during 1956, while as 8th standard student he was selected by his teacher D P Trikha to act in the Aga Hashar Kashmiri’s drama ‘Smt. Manju Devi’.

Initially given a small role, he was brought as a lead actor in the play due to his talent. His friend Mahesh Sharma enacted the role of a 'pagal'. The successful performance of the drama so impressed the officers of the education department that after six-seven shows in Jammu, the play was also staged at Hiranagar and R S Pura. Later, 'Mrs Manju Devi' along with Ramesh Mehta's play 'Apradhi Kaun', were staged at Srinagar during a camp. Impressed by the performance of the young actors, the then education minister Gulam Mohammad Sadiq not only felicitated the entire cast but also sanctioned scholarship for Bali and Lakshmi Kant Joshi (student/actor, also a musician and had learnt music along with from Shiv Kumar Sharma from Pandit Uma Dutt).

Back to Jammu, drama became a regular feature for Bali and he started watching drama performances like 'Buddh Kaam Shuddh'. Performed at a makeshift stage at Ajaibgahr (presently State Assembly), the play directed by C Parwana had the cast of actors such as Jatinder Sharma, Mahesh Sharma, J C Bharti.Another play which he witnessed was Ved Rahi's 'Diya Aur Toofan' at Zanana Park in

which Master Manohar son of Jagat Ram Kalra, did a role of a lady. Bali became a regular audience at the Diwan Mandir Ramlila where actors like Narinder Sharma (as Kekayi) and Rishi Kumar were very well appreciated for their acting. Others associated persons were Chander Kant Sharma, Lal Chand, Krishan Dutt. These were the days when Krishan Lila was also performed for seven-eight days during the Krishna Janamashtmi festival.

Other than encouragement at school, Bali also gives credit for honing his performance skills to a Rasdhari Bawa, who used to live at Pacci Dhakki, near his Bua’s home, and who taught him basics of music and dance through Talwaraan Wala dance and gymnastic movements. In an interesting reflection on the cultural life of old Jammu and patronage by citizens, Bali recalls that one Krishan Lala ‘thekdar’ has organized a show of the Rasdhari Bawa in a chowgan at Mohalla Malhotra.

After passing matriculation, Bali’s family shifted to Resham Garh Colony in Refugee Quarters. But his love for theater continued. He and his group under the banner of Young Moderate Club staged ‘Kamini’,

a Mahesh Sharma's play on Kashmir problem, at Parade ground during an exhibition in 1959. Other actors were Mahesh Sharma, Rashid Shah, Vijay Suri, Puran Gupta. It was followed by the play 'Pagla Janta Hai' at a Park in Gandhi Nagar with actors like Subahsh Bali, Ravi Rampal, Prakash Sharma, Som Nath. Bali's first job was as a daily wager in Dehat Sudhar Dept was followed by a short stint as a Lorry cleaner. The salary from these jobs enabled him to take admission in College. He joined M A M College which was then functioning from GGM Science College. Bali remembers that during those days, cchut- putt plays were being staged at a Hall in the back side of Secretariat. It was the time when a drama club was also formed at the house of Uma Mahey, niece of Comrade Dhanvanrtri). After completing B.A. in 1962, Bali's first posting as a teacher was at Gool where he actively participated in school functions including staging plays. He was posted at Gandhi Nagar Primary School in 1963 and during that period he got married.

Being a good actor, he was often invited by other drama groups to perform in their plays. So he acted in the drama clubs of Rattan Sharma, Narinder

Sharma, C Parwana, Friends Club, Roop Wani Club etc at venues which also included Ranbir School. Some of his memorable plays include ‘Dail M for Murder’ (Gyarah Bajae), Kanchan Rang, Nishachar. Other than acting he along with Subhash Raizada also designed sets for plays like Vijay Suri’s Balidan.

One of the significant events in Bali’s life was when the newly formed Gandhi Nagar Lakshmi Narayan Temple Ramlila Club invited him to act as the director. His friendly personality and passion instilled a new kind of seriousness amongst the actors. Bali’s childhood friend Subhash Raizada in the role Ravan and he himself as Dashrath, along with many actors from Gandhi Nagar, gave a new touch of realism to Gandhi Nagar Ramalila that it attracted audiences from other parts of the city.

Since involvement in Ramlila is limited to the very days of its rehearsals and performance, Bali remained active by acting and directing stage plays (for drama competitions and other wise). “I was always attracted to stage plays with bold themes, which was daring act in those days when conservative elements in the Jammu society were

ruling the roost. These plays included Under Secretary, Aur Aakash Jhuk Gaya, Pati Patni, Aakhari Swal, Barf Ki Minar, Prishatt Bhumi (by Baljit Raina), Balwant Gargi's Abhisarika, Lakeer Se Pare (Giddaan Te Loth-Rajneesh Gupta's play about the problems of an abnormal child), Baba nahin Jayaan, Dilli Ki Aakhri Shama etc. His young associates in drama included Surinder Goel and Raj Kumar, Santosh Sangra, Arun Bakshi, Sweety, Veena Dogra, Shobha, Lalita Tapasavi, J R Sagar.

A fine actor, schooled in traditional style, Raghunandan Singh Bali, is a passionate amateur artiste who since more than 50 years has been regularly involved with Ramlila, proscenium theater and since 1990s with TV and films. He who laments the downfall of government schools as premier institutions, is still active in the field and driven by innate love and passion for stage, hopes to stage plays which always wanted to perform like Surendra Verma's Suraj Ki Pehli Kiran Se Antim Kiran Tak.

****

https://www.dailyexcelsior.com/brij-katyal-bids-adieu-bollywood/

5.Lalit Gupta -Daily Excelsior September 23,2018

Bollywood's Circe-like seductions—fame, glamour, the fairy tale promise of great wealth–have been attracting from inception the dreamers, ambitious small-town aspirants, writers, poets, musicians, and many others with the hope that talent, boldness, and luck will catapult them into the big league.

One such dreamer was Brij Katyal, a Jammuite, who in the early 1950s ventured to leave hometown for Bombay, the hub of Hindi cinema and after initial days of struggle succeeded in etching his name in Bollywood hall of fame.

For Brij Katyal, the crowning glory came when he penned the story of Shashi Kapoor and Nanda starrer 'Jab Jab Phool Khile' in 1965, a super hit and a golden jubilee film which ran for 50 consecutive weeks in Mumbai cinemas like Minerva and Lakshmi Theatres. The great financial success of musical romance film, a popular genre in the 1960s, made theatre owners to gift a brand new car and rupees 50,000, to film's writer Brij Katyal.

In a film career spanning more than 50 years, Brij Katyal's notable films as script and dialogue writer

and screen playwright were Salaam Memsaab-1961, Burmah Road-1962, Darasingh: Ironman-1964, Ek Din Ka Badshah-1964, Saat Samundar Paar-1965, Yeh Raat Phir Na Aaygi-1966, Aamne-Saamne-1967, Parivar-1968, Kismat-1969, Vishwas-1969, Anokha-1975, Bhoola Bhatka-1976, Amitabh Bachchan's Ajooba-1991, Hai Meri Jaan-1991, Chhota Sa Garh-1996, Krazy Crazy Krezy… 2009. His well-known TV series include Aashiq Biwi Ka-2009, Pal Chin-1998. He had also directed two films Premika-1980 and Pasand Apni Apni- 1971. In the early 1970s, Rajesh Khanna's movie "Seema", directed by Suraj Prakash had Brij Katyal as the writer never saw completion.

During 1990's he also ventured into the world of television and penned down many popular and financially successful TV serials like 'Dillagi' and 'Saans'. Directed by Neena Gupta, these had become very popular for the characters which seemed very real.

Eighty-five years old Brij Katyal, who expired on September 13, 2018, at Mumbai, was born in 1933 at Jullahaka Mohalla, Jammu, in the family of

Sardari Lal Katyal, the grandson of Rai Sahib Col. A R Katyal, who was Quarter Master General in Maharaja Ranbir Singh's Army.

By 1948-49, Brij Katyal, who had grown up as a soft-spoken handsome young man was already acting the role of Sita in Ramlila staged at the Dewan Mandir Natak Smaj. He graduated in 1952. Narrating the firsthand account of the young days of Brij Katyal, the octogenarian J. C Bharati, a well-known Radio and theatre actor and a senior contemporary of Brij Katyal, informed that during the period immediately after Independence everybody was fired up with patriotic fervor. Jammu's youth like elsewhere in the country was enthused with nation-building spirit.

The culturally oriented young men like J.C. Bharti and Brij Katyal who were attracted to leftist ideology joined National Cultural Front, the cultural wing of the National Conference. Bharti reminiscences that how National Cultural front with Dharmveer Chopra as its secretary-general decided to stage plays about unsung characters and heroes. The play staged included Raavan, Chander Shekhar Azad,

Manzil Ki Taraf, Dinu Bhai Pant's Bawa Jitto and Shiv Parvati. Katyal used to enact female roles in the dramas. Other members of the team were D. P. Trikha-director, Dina Nath Goel-music, B.L. Kerni, Ram Kumar Abrol and Kumar Kuldeep who later directed the first Dogri film Gallaan Hoyiaan Bitiaan.

It was in 1953 that Brij Katyal having good command over Urdu, Hindi and English languages, and gifted with good handwriting, took a bold decision and moved to Bombay to try his luck as a film writer. His first major break came in 1958 when he wrote dialogues and screenplay for Kedar Sharma's film Milan. Starring Ajit, Nalini Jaywant, Daisy Irani, and Helen, the film's success paved the way for Katyal to stake his claim as a talented writer.

In his more than 50 years of career in Bombay, Brij Katyal wrote scripts, screenplays, and dialogues for a number of films and TV serials and also directed two films. Professionally he was well respected and admired by many as a 'beautiful human being'.

On the personal front, Brij Katyal remained unmarried and had adopted a son. His excessive love for the adopted son, for whom he always spent

lavishly and had put all his property in his name proved to be a heartbreaking decision for him. Because during his last days, when he suffered from rectal cancer, his adopted son did not take proper care of him and showed him to a proper doctor. He lived alone in his Bhayeander flat. Before getting admitted into the charitable hospital Avedna Sadan, he was writing a film named as Mahek.

6.Happy father's day:

एक शिक्षक की कर्तव्यनिष्ठा और अनुशासन :

Father’s Day का दिव्य पर्व हर वर्ष जून के तीसरे रविवार को आता है। हर वर्ष एक ही विचार उभर कर आता है कि क्या माता पिता को वर्ष के केवल एक दिन Mother's day /Father's day पर ही स्मरण करके अपना उत्तरदाईत्व पूर्ण किया जा सकता है,कदापि नहीं। इन्हे जीवन भर, पल-पल ,हर क्षण भी स्मरण किया जाये तो कम है। हमें तो इस दिन ऐसे अविस्मरणीय पल स्मरण हो आते हैं जिन्हे लेखनी से, शब्दों के माध्यम से चित्रण करके उन्हें अपनी अंतरात्मा के तारों से जोड़ने का प्रयास करते हैं। आज भी उसी तरह का एक संस्मरण लिखने का प्रयास कर रहे हैं, एक ऐसा संस्मरण जो हमारे पिताजी की निष्ठा और अनुशासन को दर्शाता है।

बात शायद 60 वर्ष पूर्व, 1962 के लगभग की होगी। हमारे पिताजी गवर्नमेंट हाई स्कूल Chann Rorian में हैड मास्टर थे और तीन वर्ष बाद उनकी ट्रांसफर गवर्नमेंट हाई स्कूल बरवाल में हुई थी। हमारे परिवार में पांच भाई बहिन, माता पिता समेत सात सदस्य थे। शनिवार स्कूल का कार्य समाप्त करने के बाद घर की सारी पैकिंग करनी थी और अगले दिन रविवार को ट्रक में लाद कर बरवाल पहुंचना था और फिर रविवार को ही खोल कर सोमवार स्कूल जाने के लिए तैयारी करनी थी। उन दिनों स्कूल के हैड मास्टर की पदवी को बड़े आदर सम्मान के साथ देखा जाता था। Chann Rorian गांव के ही एक ट्रक मालिक ने पिताजी को ऑफर किया था कि आपको चिंता करने की कोई बात नहीं है मैं फ्री में आपका सारा सामान लोड करके बरवाल ले जाऊंगा और वहां अनलोड करके वापिस आ जाऊंगा। रविवार 11 बजे का समय निश्चित किया गया था। माता जी ने, हम सबने तो अधिकतर सामान शनिवार की रात को ही पैक कर दिया था। रविवार को ब्रेकफास्ट करके तैयार हो गए थे कि ट्रक अपने समय पर 11 बजे आ जायेगा और हम 2-3 बजे बरवाल पहुँच जायेंगें। लेकिन ट्रक वाले का इंतज़ार करते करते सारा दिन निकल गया, उन दिनों कोई फ़ोन वगैरह तो होते नहीं थे,न कोई समाचार,न कुछ पता कि ट्रक कब आएगा, कब हम चलेंगें और पहुंचेगें। सारा दिन इंतज़ार के बाद रात 9 बजे ट्रक

आया, सामान लोड किया, फिर बरवाल अनलोड किया और इसी प्रक्रिया में रात के 12 बज गए। इस घटना से यही शिक्षा मिली कि ऐसे कामों के लिए फ्री की तो बात कभी सोचनी ही नहीं चाहिए और कोई reliable व्यक्ति ही होना चाहिए। आज की और उन दिनों की स्थिति में ज़मीन-आसमान का अंतर् है।

अब आते हैं पिता जी की निष्ठां और अनुशासन की बात पर। सर्दियों के दिन थे और स्कूल के टाइम 10 से 4 होते थे। पिताजी तो सुबह उठकर पूरे टाइम से स्कूल पहुँच गए। वह तो अपनी ड्यूटी को इतने अधिक समर्पित थे कि न तो नींद की कोई प्रॉब्लम होती थी,न भूख की चिंता। उन्हें तो कपड़े, किताबें, सामान इत्यादि कुछ भी ढूंढने की समस्या नहीं थी। उन्होंने पेण्ट-सूट ,टाई पहनी और समय से पहले ही यानि साढ़े 9 बजे स्कूल पहुँच गए। हम सारी उम्र उन्हें देखते आये थे ,समय से पहले की ही पहुंचने की आदत बन चुकी थी, यहाँ तक कि हमारी शादी में भी समय से पहले पहुंच गए थे। लड़की वाले अभी तैयारियां ही कर रहे थे। haha . यह punctuality की बात तो तीसरी पीढ़ी, हमारे बच्चों में भी आ गयी है। खैर, इस बात को इधर ही छोड़ कर चलते हैं बरवाल स्कूल में हम चारों भाई बहिन का प्रथम दिन। अगर उस दिन पिताजी ने वोह सज़ा

न दी होती तो शायद आज हम भी अधिकतर लोगों की Take-it-easy वाली category में होते। तो क्या सज़ा मिली थी हमें ?

पिताजी तो समय से पहले स्कूल पहुँच गए थे, प्रॉब्लम तो हम बच्चों की थी जिन्होंने कितना कुछ ही ढूंढना था और फिर बच्चे तो बच्चे ही होते हैं। हम तो स्कूल में समानुसार पहुंच नहीं पाए और Recess के बाद ही पहुंच पाए लेकिन स्कूल पहुँचने पर का दृश्य बहुत ही अविश्वसनीय, आश्चर्यजनक किन्तु अविस्मरणीय था जो आज तक मस्तिष्क पटल पर छाप छोड़े हुए है। Recess के बाद स्कूल का main गेट बंद कर दिया जाता था और जो बाहिर रह गया उसे सज़ा मिलती थी,तभी वह अंदर आ सकता था। आज गेट पर हम चारों खड़े थे। हैड मास्टर के बच्चे हैं तो क्या हो गया। सज़ा तो वही मिलेगी जो औरों के लिए थी ,कोई रियायत नहीं ,कोई सिफारिश नहीं। चपरासी ने गेट खोला, हम चारों ने सिर पर बस्ते रखे और शुरू कर दिए सारे स्कूल के 10 चक्र, सारा स्कूल देख रहा था, स्कूल में पूरी बिल्डिंग न होने के कारण अधिकतर क्लासें बाहिर ही लगती थीं। हम चारों शर्म से पानी पानी हो रहे थे। 10 चक्र पूरे होने के बाद ही क्लासों में जा सके। Punctuality की दिशा में यह एक बहुत ही बड़ा लेसन था। यह है उस महान आत्मा “हमारे पिताजी और हमारे शिक्षक” की शिक्षा जो आज तक हम

में और हमारे बच्चों में जागृत हुई है। नमन करते हैं आदरणीय श्री धर्म पाल त्रिखा जी को।

हरीश भिमानी:

महाभारत सीरियल से प्रसिद्ध हुए “समय” नाम के पात्र ने हमें बहुत ही प्रभावित किया है। 1980s में रिलीज़ हुए बी आर चोपड़ा जी के इस सीरियल में समय की भूमिका मशहूर वॉइस ओवर आर्टिस्ट हरीश भिमानी ने निभाई थी। हरीश जी की एक वीडियो को ऑडियो में कन्वर्ट करके हमने अपनी गाड़ी में बार बार सुना है। इस ऑडियो की एक पंक्ति,जिसे हम जब भी सुनते हैं अपने जीवन के साथ जोड़े बिना नहीं रह पाते हैं। भिमानी की प्रसिद्धि और प्रतिभा के बारे में परिवार के योगदान से सम्बंधित होस्ट के प्रश्न का रिप्लाई करते हुए भिमानी कहते हैं “ हाँ, हमारी प्रसिद्धि के लिए परिवार का अगर कोई योगदान रहा है तो केवल विरोध की शक्ल में में ही रहा है।”

आज 50-60 वर्ष बाद भी अनेकों घटनाएं एवं किस्से आँखों के आगे घूम जाते हैं जहाँ पिताजी का सहयोग तो क्या विरोध और सज़ा ही हमारे नसीब में देखने को मिली। प्रत्येक किस्से को लिखने बैठ जाएँ तो पाठक समझेंगें कि एक आज्ञाकारी बेटा अपने परिश्रमी पिता की बुराइयों का वर्णन कर रहा है। ऐसा

हरगिज़ नहीं है, इन घटनाओं का वर्णन करते समय हमारे हृदय में पिताजी के प्रति सम्मान में लेशमात्र भी कमी नहीं आयी है।

यह नहीं कि वोह हमारी सहायता नहीं करना चाहते थे, एक तो वोह अपने असूलों पर अडिग थे दूसरा उन्हें लगता था कि यह बच्चा, दूसरे बच्चों (भाई, बहिनों) की तुलना में अधिक परिश्रमी है, संकल्पशील है, यह तो स्वयं को संभाल ही लेगा । यही कारण था कि उनका सारा संघर्ष दूसरे बच्चों, अपने माता पिता, परिवार के उतार चढ़ाव में ही बीतता रहा।

वोह समय आज के (2025) के समय से अलग था, अकेले पिता जी ही कमाने वाले थे और 9 परिवारजनों का जीवनयापन उनकी ही थोड़ी सी तनख्वाह से होता था।

अगर हम लिख रहे हैं कि उन्हें हम परिश्रमी लगते थे, यह भी उनके आशीर्वाद से ही था।माता पिता के आशीर्वाद के बिना कोई भी बच्चा कुछ कर पाता है, हरगिज नहीं।

अगर हम सोचते हैं कि वोह हमारे पिता थे, हम उनके बेटे थे, कहीं बाहिर से पकड़ तो लाये नहीं थे, यह हमारी गलत मनोवृति है।

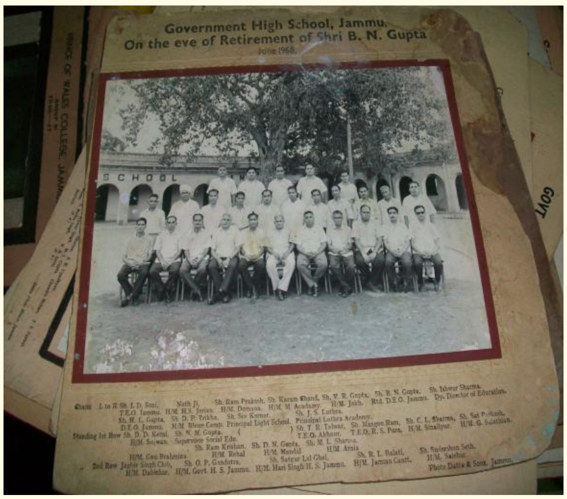
इस लघु पुस्तिका का समापन अपने पिताजी और दादा जी को दर्शाते कुछ दुर्लभ चित्रों में समाहित स्मृतियों से कर रहे हैं जिन्हे हम अपने ह्रदय में वर्षों से संजोय बैठे हैं।

धन्यवाद्

****

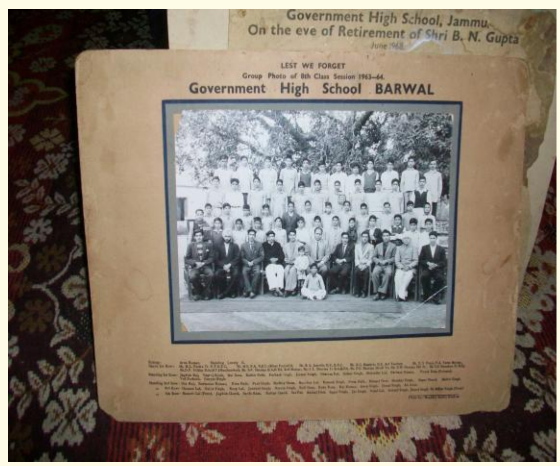

GOVT. HIGH SCHOOL, JAMMU.
10TH (B)
Annual Function 1954-55.


GOVT. HIGH SCHOOL, JAMMU.
10TH (B)
Annual Function 1954-55.


Government High School, Jammu.
On the eve of Retirement of Shri B. N. Gupta
June 1968

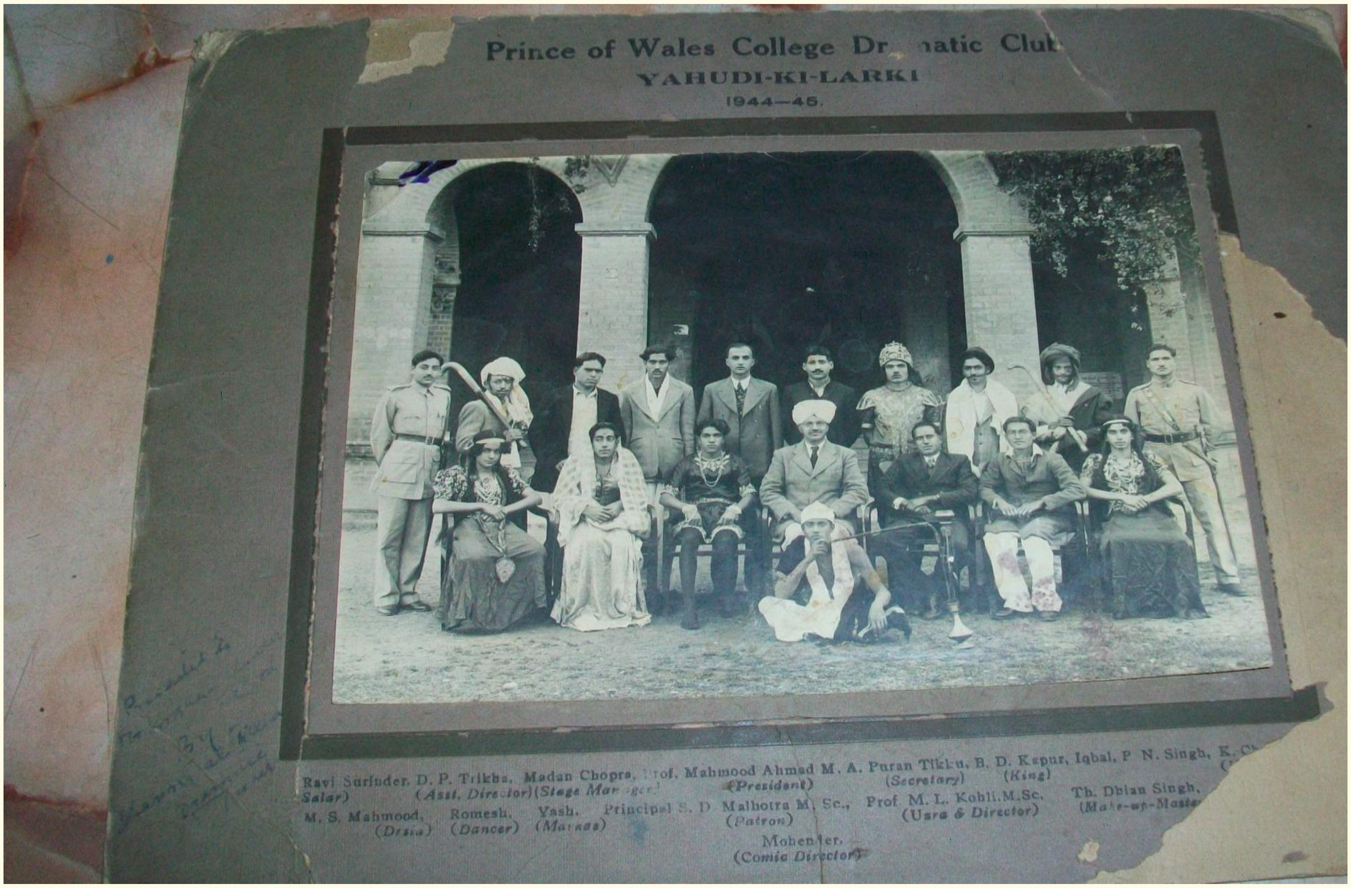

PRINCE OF WALES COLLEGE DRAMATIC CLUB

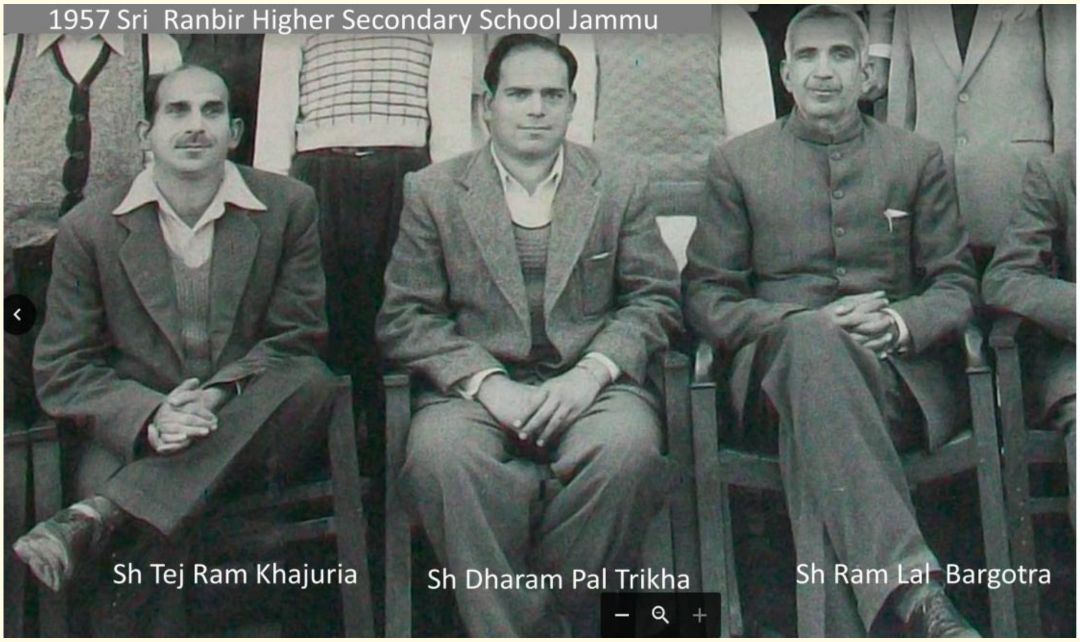

LEST WE FORGET
Group Photo of 8th Class Session 1963-64.
Government High School BARWAL

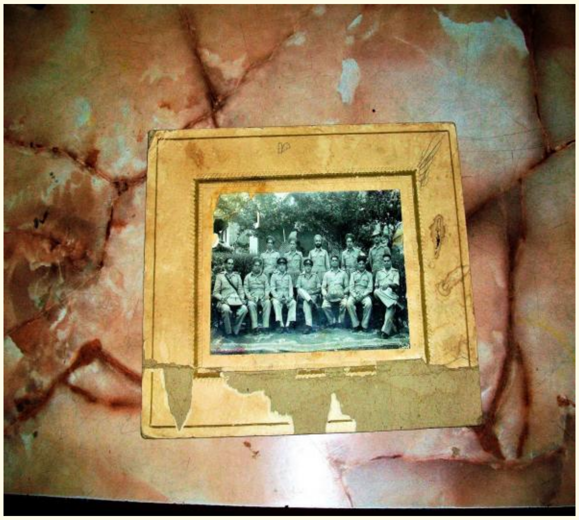

Government High School, Jammu.
On the eve of Retirement of Shri B. N. Gupta
LEST WE FORGET
Group Photo of 8th Class Session 1963-64.
Government High School BARWAL


GOVT. HIGH SCHOOL BARWAL
9th & 10th CLASSES SESSION (1965–66)

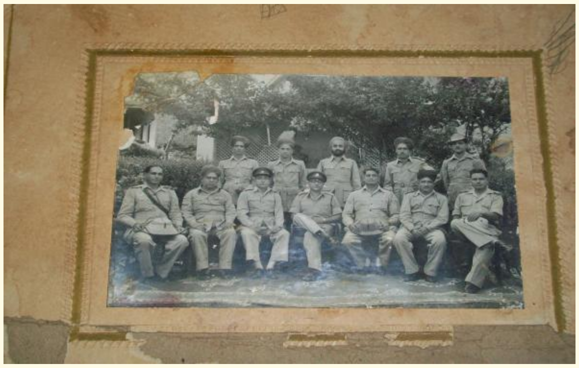



Prince of Wales College Dr matic Club
YAHUDI-KI-LARKI
1944—45.
Ravi Surinder D. P. Trikha, Madan Chopra, Prof. Mahmood Ahmad M. A. Puran Tikku, B. D. Kapur, Iqbal, P N. Singh, K. C
Salar) (Asst. Director)(Stage Manager) (President) (Secretary) (King)
M. S. Mahmood, Romesh, Yash, Principal S. D Malhotra M. Sc., Prof. M. L. Kohli.M.Sc. Th. Dhian Singh,
(Drsia) (Dancer) (Marsas) (Patron) (Usra & Director) (Make-up-Maste
Mohender,
(Comic Director)


1957 Sri Ranbir Higher Secondary School Jammu
Sh Tej Ram Khajuria
Sh Dharam Pal Trikha
Sh Ram Lal Bargotra

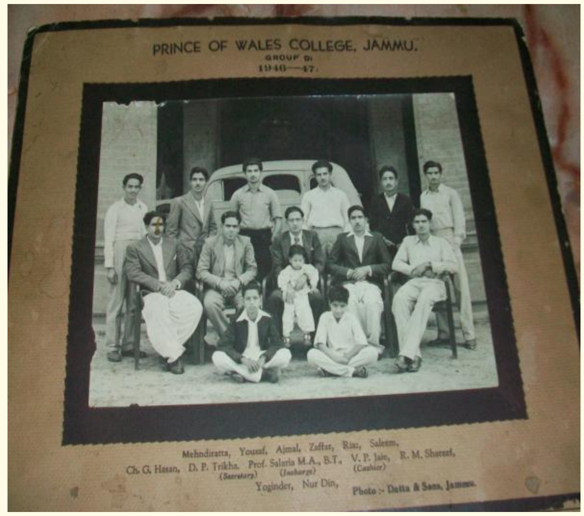



A MEMORY OF
Govt. High School, BARWAL (Kathua)
Group Photo 10th Class Session 1963—64.








PRINCE OF WALES COLLEGE, JAMMU.
GROUP D
1946—47.
Mehndiratta, Yousaf, Ajmal, Zaffar, Riaz, Saleem,
Ch. G. Hasan, D. P. Trikha. (Secretary) Prof. Salaria M.A., B.T. (Incharge) V. P. Jain, (Cashier) R. M. Shareef,
Yoginder, Nur Din,
Photo :- Datta & Sons, Jammu.


Group Photo of 8th Class Session 1963—64.
Government High School BARWAL
Sitting:- Arun Kumar, Standing Lovely X.
Chairs 1st Row:- Sh. M.L. Footra Tr. E.E B.E.C, Sh. M.S. F.A. B.E.C. (Hons Punjabi), Sh. S. S. Jasrotia E.E, B.E.C, Sh. K.C. Sumbria E.E. Art Teacher, Sh. Z. S Ponia F.A. Farm Master,
Sh.D.P. Trikha B.Sc.B.T.(Headmaster), Sh. S.P. Sharma B.A.B Ed, 2nd Master, Sh. S L. Sharma Tr B.A.B.Ed, Sh. P.C. Sharma Hindi Tr, Sh. D.R. Sharma Skt Tr, Sh D.S Manahas Tr B.Sc.
Standing 1st Row:- Jagdish Raj, Yograj Singh, Bui Dass, Keshir Nath, Parkash Singh, Jaimal Singh, Dharam Pal, Gulzar Singh, Mohinder Lal, Parbhat Kumar, Tirath Ram (Private).
Ved Parkash, Gunyar Singh:
Standing 2nd Row:- Des Raj, Sawtantar Kumar, Dina Nath, Paul Singh, Radhey Sham, Manohar Lal; Romesh Singh, Prem Nath, Mangal Dass. Shankar Singh, Sagar Chand, Balbir Singh.
" 3rd Row:- Chaman Lal, Daljit Singh, Roop Lal, Jaswant Singh, Narain Singh, Kali Dass, Kaka Ram, Raj Kumar, Roop Singh, Zirnal Singh, Ali Gour.
" 4th Row:- Banarsi Lal (Peon), Jagdish Chand, Sardu Ram, Rattan Chand, Sat Pal; Anchal Dass, Sagar Singh, Jai Singh, Nand Lal, Gobind Singh, Jaipal Singh Sh Adhar Singh (Peon)